

लघु पाराशरी सिद्धान्त (उडुदाय प्रदीप)

महर्षि पाराशर प्रणीत फलित ज्योतिष के सभी ४२ स्वर्णिम सूत्र — सरल हिंदी भावार्थ व व्यावहारिक नियम

ग्रंथ परिचय: वैदिक फलित ज्योतिष में महर्षि पाराशर की 'विंशोत्तरी दशा' सर्वातिशय प्रामाणिक प्रणाली है। लघु पाराशरी में कुल जमा ४२ सूत्रों में संपूर्ण कुण्डली फलादेश के गूढ़ नियमों (भाव फल, केंद्राधिपति दोष, राजयोग, मारक एवं दशा-अंतर्दशा फल) को अत्यंत संक्षेप और सारगर्भित रीति से पिरोया गया है।

अध्याय	विषय विस्तार	सूत्र संख्या	मुख्य विवेच्य बिन्दु
१. संज्ञा अध्याय	मूल परिभाषाएं व दृष्टि	सूत्र १ से ११	ग्रह दृष्टियां, त्रिकोण-केंद्र शुभत्व, केंद्राधिपति दोष
२. योग अध्याय	राजयोग व संबंध विचार	सूत्र १२ से २२	धर्म-कर्माधिपति योग, राहु-केतु, योगभंग नियम
३. मारक अध्याय	आयुर्दाय एवं मारकेश	सूत्र २३ से २८	अष्टम से अष्टम, द्वितीय-सप्तम मारक, शनि का प्रभाव
४. दशा-फल अध्याय	विंशोत्तरी फल विचार	सूत्र २९ से ४०	दशा-अंतरदशा संबंध, समानधर्मा, शनि-शुक्र अंतर
५. विशेष राजयोग	परिवर्तन योग व उपसंहार	सूत्र ४१ से ४२	लग्नेश-दशमेश व नवमेश-दशमेश स्थान परिवर्तन

प्रथम अध्याय: संज्ञा सिद्धांत (Fundamental Rules)

सूत्र १ — ८

सूत्र १ मंगलाचरण एवं समर्पण

यह श्रुतियों का सिद्धांत है, जिसे मैं प्रजापति के शुद्ध अंतःकरण, बिम्बफल के समान लाल अधर वाली तथा वीणा धारण करने वाली पराशक्ति (सरस्वती) के तेज को समर्पित करता हूँ।

सूत्र २ ग्रंथ प्रयोजन (उडुदाय प्रदीप)

मैं महर्षि पाराशर के होराशास्त्र पर अपनी मति के अनुसार विचार कर, दैवज्ञों के आनंद हेतु नक्षत्रों के दशा फलों को सूचित करने वाले 'उडुदायप्रदीप' ग्रंथ का संपादन करता हूँ।

सूत्र ३ विंशोत्तरी दशा की ग्राह्यता

हम इसमें नक्षत्रों की दशा के अनुसार ही शुभ-अशुभ फल कहते हैं। इस ग्रंथ के अनुसार फलकथन में केवल **विंशोत्तरी दशा (१२० वर्ष)** ही ग्राह्य है; अष्टोत्तरी आदि अन्य दशाएं यहाँ ग्राह्य नहीं हैं।

सूत्र ४ संज्ञा विरोध परिहार

सामान्य ग्रंथों से भाव, राशि इत्यादि की जानकारी ज्योतिष शास्त्रों से ग्रहण करनी चाहिए। इस ग्रंथ में जो विशेष या विपरीत संज्ञाएं दी गई हैं, वे शास्त्र के विशेष अनुरोध से प्रतिपादित हैं।

सूत्र ५ ग्रह दृष्टियों का नियम

सभी ग्रह अपने स्थान से सातवें स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। इसके अतिरिक्त **शनि** तीसरे व दसवें, **गुरु** पाँचवें व नवम तथा **मंगल** चौथे व आठवें स्थान को विशेष दृष्टि से देखते हैं।

सूत्र ६ त्रिकोण शुभत्व व त्रिषडाय पाप फल

(अ) कोई भी ग्रह त्रिकोण (१, ५, ९ भाव) का स्वामी होकर शुभ फलदायक होता है। त्रिषडाय (३, ६, ११ भाव) का स्वामी होने पर पाप फलदायक होता है।
(ब) यदि त्रिषडाय का स्वामी त्रिकोण का भी स्वामी बने, तो वह अशुभ फल ही देता है (स्वराशि स्थित होने पर दोष कम होता है)।

सूत्र ७ केंद्राधिपति का सौम्य/क्रूर नियम

सौम्य ग्रह (बुध, गुरु, शुक्र, पूर्ण चंद्र) केंद्रों के स्वामी होकर शुभ फल त्याग देते हैं (दोषी होते हैं)। क्रूर ग्रह (सूर्य, शनि, मंगल, क्षीण चंद्र, पापयुक्त बुध) केंद्र के स्वामी होकर अपना अशुभ फल छोड़ देते हैं। केंद्र भावों का बल उत्तरोत्तर अधिक है (४ < ७ < १०)।

सूत्र ८ द्वितीय व द्वादश भाव (सहचर्य नियम)

द्वितीय (धन) व द्वादश (व्यय) भाव के स्वामियों का अपना स्वतंत्र फल नहीं होता। वे अन्य ग्रहों के सहचर्य (युति/दृष्टि) अथवा जिस अन्य भाव में बैठते हैं, उसी के अनुरूप शुभ या अशुभ फल प्रदान करते हैं।

सूत्र ९ अष्टमेश का विचार एवं अपवाद

अष्टम भाव भाग्य भाव (९वें) का व्यय (१२वां) स्थान है, अतः अष्टमेश प्रायः अशुभ फलदायी होता है। परंतु यदि अष्टमेश स्वयं **लग्नेश** भी हो (मेष लग्न में मंगल, तुला लग्न में शुक्र), तो वह शुभ फल ही देता है।

सूत्र १० केंद्राधिपति दोष एवं मारकत्व

शुभ ग्रहों का केंद्राधिपति दोष विशेष रूप से **गुरु और शुक्र** को सर्वाधिक लगता है। ये दोनों यदि केंद्राधिपति होकर मारक स्थानों (२ या ७ भाव) में स्थित हों अथवा इनके स्वामी हों, तो अत्यंत प्रबल मारक बन जाते हैं।

सूत्र ११ दोषों की तारतम्यता व सूर्य-चंद्र नियम

केंद्राधिपति दोष शुक्र की तुलना में बुध को कम, और बुध की तुलना में चंद्र को और भी कम लगता है। इसी प्रकार **सूर्य और चंद्रमा** को अष्टमेश होने का दोष कभी नहीं लगता।

द्वितीय अध्याय: राजयोग एवं कारकत्व सिद्धान्त

केंद्र-त्रिकोण संबंध

सूत्र १२ मंगल का दशमेश व त्रिकोणेश फल

मंगल दशम भाव का स्वामी होकर तभी शुभ फल देता है, जब वह साथ में किसी त्रिकोण (पंचम) का स्वामी भी हो (जैसे कर्क लग्न में मंगल ५वें व १०वें का स्वामी होकर परम राजयोगकारक बनता है)। केवल दशमेश होने से शुभ फल नहीं देता।

सूत्र १३ राहु एवं केतु का छाया स्वभाव

राहु और केतु जिन-जिन भावों में बैठते हैं अथवा जिन भावों के स्वामियों के साथ युति करते हैं, वे स्वयं उसी भाव और उसके स्वामी का स्वरूप ग्रहण कर तदनुरूप ही शुभ या अशुभ फल प्रदान करते हैं।

सूत्र १४ विशुद्ध केंद्र-त्रिकोण स्वामियों का योग

ऐसे केंद्राधिपति और त्रिकोणाधिपति जिनकी दूसरी राशि किसी अशुभ स्थान (३, ६, ८, ११, १२) में न पड़ती हो, उनका पारस्परिक संबंध विशेष प्रभावशाली और उच्च कोटि का राजयोग निर्मित करता है।

सूत्र १५ दोषयुक्त स्वामियों का योग संबंध

यदि केंद्र और त्रिकोण के स्वामी स्वयं व्यक्तिगत रूप से दोषयुक्त (अन्यथा पापी) भी हों, किंतु परस्पर युति अथवा दृष्टि संबंध स्थापित करते हैं, तो वह संबंध निर्विवाद रूप से **योगकारक** बन जाता है।

सूत्र १६ धर्म-कर्माधिपति महा राजयोग

नवमेश (धर्म भाव) और दशमेश (कर्म भाव) अपने-अपने स्थानों में स्थित हों या परस्पर एक-दूसरे के स्थान में बैठें (परिवर्तन), तो यह अत्यंत शक्तिशाली योगकारक और प्रतिष्ठित राजयोग बनता है।

सूत्र १७ नवम-पंचमेश का केंद्रेश से संबंध

नवम अथवा पंचम भाव के अधिपति के साथ यदि किसी बलवान केंद्राधिपति (४, ७, १०) का शुभ दृष्टि या युति संबंध बन जाए, तो वह जातक के जीवन में राजयोग कारक फल सिद्ध होता है।

सूत्र १८ योगकारक दशा में राजयोग प्राप्ति

योगकारक ग्रहों (केंद्र व त्रिकोण के संबंधी ग्रहों) की दशा में प्रायः राजयोग का फल प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त इन योगकारक ग्रहों से असंबंधित शुभ ग्रहों की दशाओं में भी यत्किंचित राजयोग फल मिलता है।

सूत्र १९ पापी ग्रह का राजयोग में सहयोग

यदि कोई पापी ग्रह योगकारक ग्रह से संबंध स्थापित करे, तो वह अपनी महादशा में योगकारक ग्रह की अंतर्दशा आने पर अपने निजी बल के अनुसार योगकारक शुभ फल ही प्रदान करता है।

भाव त्रेणी	सम्मिलित भाव	मूल प्रकृति	फलित में व्यावहारिक प्रभाव
त्रिकोण (लक्ष्मी स्थान)	१, ५, ९	सदा शुभ	धर्म, विद्या, पूर्वपुण्य, समृद्धि और दैवीय कृपा
केंद्र (विष्णु स्थान)	१, ४, ७, १०	तटस्थ/शक्तिवर्धक	पुरुषार्थ, पद, प्रतिष्ठा; शुभ ग्रह दोष पाते हैं, क्रूर शांत होते हैं
त्रिषडाय (उपचय)	३, ६, ११	पापफलप्रद	कलह, रोग, ऋण, ईर्ष्या; स्वराशि होने पर ही दोषरहित

सूत्र २० केंद्र व त्रिकोण का एक ही स्वामी

यदि एक ही ग्रह केंद्र और त्रिकोण दोनों का स्वामी हो (जैसे वृष लग्न में शनि ९-१० भाव का स्वामी, तुला लग्न में शनि ४-५ भाव का स्वामी), तो वह स्वतः परम योगकारक होता है। उसका संबंध यदि अन्य त्रिकोण से हो, तो सर्वोत्तम राजयोग बनता है।

सूत्र २१ राहु-केतु का केंद्र/त्रिकोण में योग

राहु अथवा केतु यदि केंद्र में बैठकर त्रिकोणेश से संबंध करें, या त्रिकोण में बैठकर केंद्रेश से संबंध स्थापित करें, तो वे अत्यंत फलदायी राजयोगकारक बन जाते हैं।

सूत्र २२ राजयोग भंग का विशेष नियम

धर्म (९वें) व कर्म (१०वें) भाव के स्वामी यदि क्रमशः अष्टमेश और लाभेश (११वें) भी हों, तो उनका संबंध योगकारक नहीं बनता (उदा. मिथुन लग्न में शनि ८-९ का स्वामी व गुरु १०-११ का स्वामी)। इसे राजयोग भंग समझना चाहिए।

तृतीय अध्याय: आयुर्दाय एवं मारक स्थान निर्णय

भाव २, ७ व आयु निर्णय

सूत्र २३ आयु स्थान एवं मारक भाव की उत्पत्ति

लग्न से अष्टम भाव को आयु स्थान कहा गया है, और 'भावात् भावम्' नियम से अष्टम से अष्टम (तीसरा भाव) आयु की आयु है। इन दोनों आयु स्थानों के व्यय (१२वें) स्थान क्रमशः द्वितीय (२) व सप्तम (७) भाव हैं; अतः इन्हें मारक स्थान कहा गया है।

सूत्र २४ द्वितीय भाव की प्रबलता व मारक युति

द्वितीय और सप्तम दोनों मारक स्थानों में से द्वितीय स्थान सप्तम की तुलना में अधिक बलवान मारक होता है। इन स्थानों में जो पापग्रह बैठे हों और मारकेशों के साथ युति कर रहे हों, उनकी दशा में मृत्यु की संभावना होती है।

सूत्र २५ सप्तमेश व द्वितीयेश की दशा

यदि उन मारक-युक्त पापग्रहों की दशा में मृत्यु का योग न बने, तो सप्तमेश की दशा में अथवा उससे भी अधिक बलवान द्वितीयेश की महादशा या अंतर्दशा में जातक का मरण होता है।

सूत्र २६ क्रमिक मारक निर्णय व्यवस्था

यदि मारकेशों की दशा में मृत्यु न हो, तो कुंडली में जो सबसे बलवान पापी ग्रह हो, उसकी दशा में मरण होता है। यदि व्ययाधिपति (१२वें) की दशा में मृत्यु न हो, तो उससे संबंधित पापग्रह में, अन्यथा उससे संबंधित शुभग्रह में, फिर अष्टमेश में, और अंततः तृतीयेश की दशा में मृत्यु जाननी चाहिए।

विशेष: मारक स्थानाधिपति से संबंध रखने वाले शुभ ग्रहों को भी मारकत्व का दोष लग जाता है।

सूत्र २७ बलवान पापग्रह का मारकत्व

यदि प्रत्यक्ष मारक ग्रहों की दशा उपलब्ध न हो, तो जातक की कुंडली में जो प्राकृतिक अथवा तात्कालिक सबसे बलवान पापग्रह उपस्थित हो, उसी की दशा में विद्वानों को मारक की कल्पना करनी चाहिए।

सूत्र २८ शनि का मारक अतिक्रमण अधिकार

पापफल देने वाला शनि जब किसी भी प्रकार से मारक ग्रहों (२, ७ भाव या उनके स्वामियों) से संबंध स्थापित कर लेता है, तब वह अन्य समस्त प्रबल मारकेशों का अतिक्रमण (उल्लंघन) कर स्वयं निःसंदेह साक्षात् मारक बन जाता है।

❖ मारक निर्धारण का पाराशरी वरीयता क्रम (Hierarchy of Marakas)

१. मारक-युक्त पापग्रह
(२/७ भाव में स्थित)



२. द्वितीयेश व सप्तमेश
(२ भाव > ७ भाव)



३. मारक-संबंधी शनि
(सर्वोपरि अतिक्रमण)



४. अष्टमेश / तृतीयेश
(आयु के व्ययेश)

सूत्र २९ दशा-अंतर्दशा का सामान्य नियम

सभी ग्रह अपनी-अपनी महादशा और अंतर्दशा में अपने अधिष्ठित भाव व स्वामित्व के अनुरूप शुभ या अशुभ फल प्रदान करते हैं। (विशेष: कोई भी ग्रह अपनी ही महादशा की स्व-अंतर्दशा में पूर्ण फल नहीं देता; फल अन्य ग्रहों के अंतर में खुलता है)।

सूत्र ३० समानधर्मा ग्रहों की अंतर्दशा

दशानाथ जिन ग्रहों के साथ संबंध रखता हो, और जो ग्रह दशानाथ के समान स्वभाव व समान फल देने वाले (समानधर्मा) हों, उनकी अंतर्दशा में दशानाथ अपने निजी स्वभाव का वास्तविक फल प्रचुरता से देता है।

सूत्र ३१ असंबंधी व विरुद्धधर्मा ग्रहों का फल

दशानाथ से संबंधरहित तथा विपरीत फल देने वाले ग्रहों की अंतर्दशा में, दशाधिपति और अंतर्दशाधिपति दोनों के स्वतंत्र स्वभाव और बल की सूक्ष्म कल्पना करके मिश्रित फल समझना चाहिए।

सूत्र ३२ केंद्रेश व त्रिकोणेश की परस्पर अंतर्दशा

केंद्र का स्वामी अपनी महादशा में संबंधित त्रिकोणेश की अंतर्दशा में श्रेष्ठ शुभ फल प्रदान करता है। इसी प्रकार त्रिकोणेश भी केंद्रेश के संबंध होने पर शुभ फल देता है। यदि दोनों का परस्पर कोई संबंध न हो, तो दोनों अशुभ फल देने लगते हैं।

सूत्र ३३ मारक अंतर्दशा में राजयोग आरंभ

यदि मारक ग्रहों की अंतर्दशा में राजयोग का आरंभ हो, तो वह अंतर्दशा मनुष्य को केवल सत्ता या अधिकार की ख्याति और नाममात्र की प्रसिद्धि देती है, किंतु वास्तविक भौतिक सुख और स्थिरता नहीं दे पाती।

सूत्र ३४ संबंधी व असंबंधी शुभ अंतर्दशा

राजयोगकारक ग्रहों से संबंधित शुभ ग्रहों की अंतर्दशा में राजयोग प्रारंभ हो, तो राज्यसुख और प्रतिष्ठा में तीव्र वृद्धि होती है। यदि असंबंधित शुभग्रह की अंतर्दशा हो, तो फल सम (यथावत) रहता है; न अत्यधिक वृद्धि होती है, न कमी।

सूत्र ३५ योगकारक संबंधी शुभग्रह की महादशा

योगकारक ग्रहों के साथ संबंध करने वाले शुभग्रहों की महादशा में जब स्वयं योगकारक ग्रह की अंतर्दशा आती है, तब योगकारक ग्रह अपने राजयोग का विशिष्ट शुभ फल निश्चित रूप से प्रकट करते हैं।

सूत्र ३६ राहु-केतु की निष्पाप स्थिति व फल

राहु अथवा केतु यदि केंद्र (विशेषतः ४थे व ९वें) या त्रिकोण में अकेले स्थित हों और किसी पापग्रह से युक्त न हों, तो उनकी महादशा में योगकारक ग्रहों की अंतर्दशा आने पर वे उत्तम शुभ राजयोग फल प्रदान करते हैं।

महादशा स्वामी	अंतर्दशा स्वामी	संबंध की स्थिति	प्राप्त होने वाला फलादेश
केंद्राधिपति	त्रिकोणाधिपति	युति अथवा पूर्ण दृष्टि	परम राजयोग, प्रतिष्ठा, पदोन्नति एवं आर्थिक समृद्धि
केंद्राधिपति	त्रिकोणाधिपति	परस्पर असंबंधित	शुभफल का अभाव; अप्रत्याशित बाधाएं व संघर्ष
राजयोगकारक ग्रह	मारक ग्रह	युत अथवा दृष्ट	अधिकार व प्रसिद्धि तो मिले, किंतु मानसिक सुख व शांति भंग
शुभ केंद्रस्थ राहु/केतु	योगकारक ग्रह	पाप संबंध रहित	आकस्मिक भाग्योदय, उच्च पद एवं विशिष्ट सफलता

सूत्र ३७—३८ पापी महादशा में अंतर्दशा फल विचार

- यदि महादशानाथ पापी हो, तो उसके असंबंधी शुभग्रह की अंतर्दशा भी पापफल ही देती है।
- पापी दशानाथ के संबंधी शुभग्रह की अंतर्दशा मिश्रित (शुभ-अशुभ) फल देती है।
- पापी दशानाथ से असंबंधित योगकारक ग्रह की अंतर्दशा अत्यंत दारुण व कष्टप्रद पापफल देती है।

सूत्र ३९ मारक दशा में शुभ व पाप अंतर

मारक ग्रहों की महादशा में जब उनके साथ संबंध रखने वाले शुभग्रहों की अंतर्दशा आती है, तब दशानाथ मारक नहीं बनता (रक्षा होती है)। परंतु मारक दशानाथ से असंबंधित पापग्रह की अंतर्दशा में वह निश्चित ही मारक फल देता है।

सूत्र ४० शनि-शुक्र की परस्पर अद्भुत दशा गति

शनि और शुक्र का दशाक्रम विचित्र है—शनि की महादशा में शुक्र का अंतर आए तो **शनि के फल** प्रकट होते हैं, और शुक्र की महादशा में शनि का अंतर आए तो **शुक्र के फल** मिलते हैं। इस विशिष्ट फल के लिए दोनों के आपसी संबंध की भी अपेक्षा नहीं होती।

पंचम अध्याय: विशेष राजयोग एवं महायोग

स्थान परिवर्तन योग

सूत्र ४१ लग्नेश-दशमेश स्थान परिवर्तन राजयोग

दशम भाव का स्वामी लग्न में स्थित हो और लग्न का स्वामी दशम भाव में विराजमान हो, तो यह अत्यंत दुर्लभ एवं सर्वोत्कृष्ट **राजयोग** होता है। ऐसा जातक जीवन में सर्वत्र विख्यात, कीर्तिमान, ऐश्वर्यवान और सदा विजयी होता है।

सूत्र ४२ धर्म-कर्माधिपति परिवर्तन महा राजयोग

नवम भाव (भाग्य) का स्वामी दशम (कर्म) में हो और दशम भाव का स्वामी नवम भाव में स्थित हो—यह परस्पर परिवर्तन योग ज्योतिष का सर्वश्रेष्ठ **धर्म-कर्माधिपति राजयोग** है। इस योग में उत्पन्न जातक प्रतापी, यशस्वी, उच्च सत्तासीन और सर्वजन पूज्य होता है।

❖ फलित ज्योतिष के ५ स्वर्णिम पाराशरी सूत्र (Quick Mobile Summary)

- त्रिकोणेश सदा शुभ:** १, ५, ९ भावों के अधिपति स्वभावतः कुंडली के सबसे बड़े रक्षक और शुभ फलदाता हैं।
- केंद्राधिपति दोष:** शुभ ग्रह केंद्र के स्वामी होकर निष्फल/मारक बनते हैं, जबकि पाप ग्रह केंद्रेश बनकर शुभ होते हैं।
- राजयोग का सूत्र:** केंद्र (विष्णु) और त्रिकोण (लक्ष्मी) के स्वामियों की युति, दृष्टि या स्थान परिवर्तन ही सच्चा राजयोग है।
- मारक का नियम:** २ और ७ भाव मारक हैं; द्वितीय भाव अधिक घातक है, और शनि का मारक संबंध सर्वोपरि है।
- दशा की कुँजी:** पापी महादशा में असंबंधित योगकारक अंतर्दशा विपत्ति लाती है; संबंधित ग्रह ही वास्तविक फल खोलते हैं।

॥ इति महर्षि पाराशर विरचितं लघु पाराशरी (उडुदाय प्रदीप) संपूर्णम् ॥

॥ शुभं भवतु • सर्वजन सुखिनो भवन्तु ॥